भारतेन्दु युग और उसकी प्रवृत्तियाँ

हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल का प्रारम्भ भारतेन्दु युग से माना जाता है। साहित्य के इतिहास में इसे गद्य-काल के नाम से जाना जाता है। वस्तुत: भारतेन्दु युग हिन्दी में विविध गद्य विधाओं के प्रवर्तन का काल है। भारतेन्दु को हिन्दी में नवजागरण का अग्रदूत माना जाता है। वे एक व्यक्ति से बढ़कर संस्था थे। उन्होंने अपने समानधर्मा लेखकों का मण्डल तैयार किया, जिसे 'भारतेन्दु मण्डल' के नाम से जाना जाता है। अपने समय के रचनाकारों के साथ मिलकर उन्होंने हिन्दी साहित्य में एक नवीन युग का सूत्रपात किया। यह नवीन युग काल, प्रवृत्ति, चेतना, विधा हर दृष्टि से नया था। नवीन युग की नई चेतना और विधा के वाहक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र थे। इनका समय सन् 1850 से 1885 तक है। इसीलिए सामान्य तौर पर उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध को साहित्य में भारतेन्दु युग के नाम से जाना जाता है।

1. **भारतेन्दु युग और नवीन चेतना**

नई चेतना के कारण भारतेन्दुयुगीन साहित्य हिन्दी की रीतिकालीन चेतना से मुक्त हुआ। यह नई चेतना आधुनिकता से सम्पृक्त थी। आधुनिक चेतना के निर्माण और विकास में युगीन परिस्थितियों का योगदान है। भारत में अंग्रेजों का वर्चस्व 18वीं सदी के उत्तरार्द्ध में बढ़ गया। भारत के परम्परागत उद्योगों को अंग्रेजों ने नष्ट कर दिया। उन्होंने भारत की कृषि व्यवस्था पर नियन्त्रण स्थापित कर किसानों पर लगान का बोझ बहुत बढ़ा दिया। भारत के आर्थिक शोषण और सैन्य नियन्त्रण के लिए सुदूर प्रदेशों तक रेल की पटरियाँ बिछा दीं। देशी नरेशों से समझौता करके उनके शोषण को अंग्रेजों ने बढ़ावा दिया। भारत पर अंग्रेजों के बढ़ते आर्थिक शोषण और राजनीतिक नियन्त्रण के खिलाफ सन् 1857 का व्यापक विद्रोह हुआ। इसे भारत के प्रथम स्वाधीनता संग्राम के रूप में जाना जाता है।

भारतेन्दु और उनके मण्डल के लेखकों पर युगीन स्थितियों का स्पष्ट प्रभाव है। भारतेन्दुयुगीन लेखकों को रीतिकालीन अतिशय शृंगारिक चित्रण, नायिका-भेद, नख-

शिख, चमत्कार-प्रदर्शन आकृष्ट नहीं करते। इस युग के लेखक देश की दुर्दशा पर चिन्तित होते हैं। इनके साहित्य में देशानुराग कूट-कूट कर भरा है। एक नए तरह की राष्ट्रीय चेतना के प्रथम स्वर हमें भारतेन्दुयुगीन साहित्य में परिलक्षित होते हैं। भारतेन्दुयुगीन साहित्य में चेतना के दो रूप स्पष्ट तौर पर मिलते हैं-राष्ट्रीय और सामाजिक। राष्ट्रीय चेतना का स्वर अंग्रेजी राज और खास तौर पर उसके द्वारा किए जा रहे आर्थिक शोषण का विरोध करता है। सामाजिक चेतना का स्वर भारतीय समाज में फैली तमाम बुराइयों और रूढ़ियों का विरोध करता है। बाल-विवाह, पर्दा-प्रथा, नारी अशिक्षा, धार्मिक पाखण्ड जैसी सामाजिक कुरीतियों का खण्डन भारतेन्दुयुगीन साहित्य का प्रधान लक्ष्य है। भारतेन्दु सच्चे अर्थों में हिन्दी साहित्य में नवजागरण के अग्रदूत थे।

भारतेन्दु युग के बारे में हिन्दी के महान आलोचकों के मतों को संक्षेप में देखना समीचीन है। रामचन्द्र शुक्ल के हवाले से विश्वनाथ त्रिपाठी ने लिखा है "भारतेन्दु ने हिन्दी साहित्य को एक नए मार्ग पर खड़ा किया। वे हिन्दी साहित्य के नए युग के प्रवर्तक हुए। यद्यपि देश में नए-नए विचारों और भावनाओं का संचार हो गया था, पर हिन्दी उनसे दूर थी।" (*हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास*, पृष्ठ- 72) आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इसका सटीक विश्लेषण करते हुए लिखा है- "भारतेन्दु का पूर्ववर्ती काव्य साहित्य सन्तों की कुटिया से निकलकर राजाओं और रईसों के दरबार में पहुँच गया था, उन्होंने एक तरफ तो काव्य को फिर से भक्ति की पवित्र मन्दाकिनी में स्नान कराया और दूसरी तरफ उसे दरबारीपन से निकालकर लोकजीवन के आमने-सामने खड़ा कर दिया।" (वही, पृष्ठ-72) डॉ. रामविलास शर्मा ने भारतेन्दुयुगीन साहित्य को 'ग़दर' से प्रभावित मानते हुए उसके जनवादी स्वरूप को स्पष्ट किया है। उनके शब्दों में भारतेन्दु युग का साहित्य "भारतीय समाज के पुराने ढाँचे से सन्तुष्ट न रहकर उसमें सुधार भी चाहता है। वह केवल राजनीतिक स्वाधीनता का साहित्य न होकर मनुष्य की एकता, समानता और भाईचारे का भी साहित्य है। भारतेन्दु स्वदेशी आन्दोलन के ही अग्रदूत न थे, वे समाज सुधारकों में भी प्रमुख थे।" (वही, पृष्ठ-72) नवजागरण और आधुनिकता की चेतना से सम्पृक्त भारतेन्दुयुगीन साहित्य सचमुच हिन्दी साहित्य में एक नवीन युग का सूत्रपात करता है। नवीन युग की वैज्ञानिक चेतना, यन्त्रों के विकास के साथ छापेखानों की मशीनों के प्रचलन, बढ़ते औद्योगीकरण, नगरीकरण, राष्ट्रीय-राज्यों के उदय जैसी परिस्थितियों ने हिन्दी साहित्य के गद्य को बढ़ावा दिया। उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ

में हिन्दी साहित्य के गद्य का ठीक से प्रादुर्भाव हुआ। यह गद्य साहित्य उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध तक इतना प्रभावी हुआ कि वह कविता से अधिक महत्त्वपूर्ण हो उठा।

भारतेन्दु युग में पद्य पर गद्य की प्रधानता का बड़ा कारण गद्य में नवीन विधाओं का प्रादुर्भाव भी है। भारतेन्दु युग में नाटक के पुनर्प्रचलन और कथारूपों के नवागत प्रयोगों के साथ निबन्ध, आलोचना, पत्र-पत्रिकाओं में सम्पादकीय जैसे नवीन गद्य रूपों का विकास हुआ।

हम जानते हैं कि भारतेन्दु युग से पूर्व का हिन्दी साहित्य प्राय: कविता का साहित्य है। आदिकाल, भक्तिकाल और रीतिकाल का समूचा साहित्य प्राय: कविता का है। छिटपुट गद्य के नमूने मिलते हैं, लेकिन वे बहुत कम हैं। भारतेन्दु युग से ठीक पूर्व, अर्थात उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में फोर्ट विलियम कालेज के भाषा प्राध्यापकों के लेखन से हिन्दी साहित्य में गद्य के विकास की वास्तविक नींव पड़ी। ये भाषा प्राध्यापक थे - सदल मिश्र, सदासुखलाल, लल्लू लाल और इंशा अल्ला खां। इनके अतिरिक्त रामप्रसाद निरंजनी, राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द और राजा लक्ष्मण सिंह के नाम हिन्दी गद्य के विकास की दृष्टि से उल्लेखनीय है। आगे भारतेन्दु युग में विकसित हिन्दी साहित्य की मूल चेतना और प्रवृत्तियों के विकास और स्वरूप की चर्चा की जाएगी।

1. **भारतेन्दु युग में हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ**

भारतेन्दु युग की यह विलक्षण सच्चाई है कि इस युग में रचित गद्य साहित्य की भाषा खड़ीबोली है, जबकि कविता की भाषा प्राय: ब्रजभाषा। भारतेन्दु और उनके सहयोगियों ने प्राय: ब्रजभाषा में ही कविता की। भारतेन्दु ने खड़ीबोली में कविता करने की कोशिश की, परन्तु वे उससे सन्तुष्ट नहीं थे। इसे स्वीकार करते हुए भारतेन्दु ने लिखा है-"मैंने आप कई बेर परिश्रम किया कि खड़ीबोली में कुछ कविता बनाऊँ पर वह मेरे चित्तानुसार नहीं।" भारतेन्दु उर्दू में 'रसा' नाम से कविता करते थे। ध्यातव्य है कि भारतेन्दुयुगीन ब्रजभाषा रीतिकालीन ब्रजभाषा से भिन्न है। भारतेन्दुयुगीन ब्रजभाषा पर युगीन नवीन चेतना, वैचारिकता और गद्यात्मकता का

प्रभाव है। भारतेन्दुयुगीन कविता की ब्रजभाषा का गठन खड़ीबोली के काव्य गठन के अनुरूप है।

भारतेन्दु ने भक्तिपरक और रीतिपरक दोनों तरह की कविताएँ की हैं, लेकिन उनकी कविताओं में सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना का स्वर प्रधान है। भारतेन्दु युग में जीवन, समाज और देश की समस्याएँ कविता की विषय बनीं। भारतेन्दु और उनके समकालीन कवियों ने तत्कालीन ब्रिटिश साम्राज्य द्वारा भारत के आर्थिक दोहन और शोषण को उजागर किया। भारतेन्दु द्वारा रचित प्रसिद्ध पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं-

अंगरेज राज सुख-साज सजे सब भारी
पै धन विदेस चलि जात इहै अति ख्वारी।

भारतेन्दु ने युगीन चेतना के अनुरूप देश की दुर्दशा का चित्रण कर राष्ट्रीय चेतना पैदा करने का स्तुत्य प्रयास किया। भारत की जातीय चेतना के रूप में उन्होंने भाषा-समस्या पर विचार करते हुए लिखा है-

निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल
बिनु निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को शूल।

यद्यपि भारतेन्दु की कविता में देशभक्ति के साथ कहीं-कहीं राजभक्ति का भी संयोग मिलता है, लेकिन उनमें देशभक्ति और नवजागरण की चेतना का स्वर प्रधान है। इस युग के दूसरे महत्त्वपूर्ण कवि प्रतापनारायण मिश्र ने भारत के आर्थिक शोषण को उजागर करते हुए अंग्रेजी की पोल खोली। उनकी कविताओं में क्षोभ का स्वर मार्मिक है। देशभक्ति परक कविताओं में उनकी व्यंग्य की मारक क्षमता देखते बनती है-

जग जाने इंग्लिश हमें, वाणी वस्त्रहि जोय।
मिटै वदन कर श्याम रंग, जन्म सुफल तब होय।

देशवासियों पर व्यंग्य करते हुए प्रतापनारायण मिश्र ने लिखा-"सर्वसु लिए जात अंगरेज हम केवल लेक्चर की तेज।" बद्रीनारायण चौधरी प्रेमघन इस युग के महत्त्वपूर्ण

कवि हैं। उनकी कविता में गाँव प्रधान है। *जीर्ण जनपद* या *दुर्दशा दतापुर* में उन्होंने गाँव की दुर्दशा का यथार्थवादी वर्णन किया है। बच्चन सिंह के अनुसार-"लघु खण्डकाव्य लिखने की शुरुआत यहीं से होती है।" भारतेन्दु युग के अन्य कवियों में जगमोहन सिंह स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति और प्रकृति चित्रण के लिए उल्लेखनीय हैं।

युगीन चेतना से इतर भक्तिपरक और रीतिपरक ब्रजभाषा कविता का रूप भी भारतेन्दु युग में प्रचलित रहा है। उल्लेखनीय है कि भारतेन्दु की भाषा सरल, सहज होने के साथ ब्रजभाषा की बहुत-सी रूढ़ियों से मुक्त है। इस युग में कवियों ने लोकप्रचलित काव्यरूपों को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। भारतेन्दु ने अमीर खुसरो जैसी पहेलियाँ और मुकरियाँ लिखीं। प्रतापनारायण मिश्र ने लावनी, आल्हा लिखा। भारतेन्दु की मुकरियाँ खड़ीबोली में हैं। गद्य-पद्य की भाषा का अलगाव इस युग की खटकने वाली सच्चाई है, किन्तु यह अधिक दिन चलने वाला नहीं था। भारतेन्दु युग के अन्त तक श्रीधर पाठक ने खड़ीबोली में *एकान्तवासी योगी (*1886) और *जगत सच्चाई सार*(1887) लिखकर यह संकेत दे दिया कि भविष्य में कविता की भाषा खड़ीबोली ही बनेगी। द्विवेदी युग में यह चरितार्थ होते दिखा।

भारतेन्दु युग के सन्दर्भ में रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा-"विलक्षण बात यह है कि आधुनिक गद्य साहित्य की परम्परा का प्रवर्तन नाटकों से हुआ।" इसका जरूरी प्रतिवाद करते हुए बच्चन सिंह ने लिखा है कि "विलक्षण बात तब होती जब यह प्रवर्तन नाटकों से न होता।" वस्तुत: भारतेन्दु युग से पहले का हिन्दी साहित्य रीतिकालीन प्रवृत्तियों से युक्त दरबारी अधिक था। समाज की व्यापक समस्याओं से उसका कुछ ख़ास सरोकार न था। भारतेन्दु ने अपने युग के हिन्दी साहित्य को नवजागरण की चेतना के साथ वृहत्तर सामाजिक समस्याओं से जोड़ा। नाटक लोकजागरण का सशक्त माध्यम है। भारतेन्दुयुगीन रचनाकारों ने युगीन चेतना के प्रकटीकरण के लिए नाटक विधा का बखूबी इस्तेमाल किया। विधाओं के विकास के रूप में नाटकों का पुनर्प्रचलन भारतेन्दु युग की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विशेषता है।

खड़ीबोली में रचित पहले नाटक को लेकर आज भी विवाद है। इस सन्दर्भ में विश्वनाथ सिंह के *आनन्द रघुनन्दन*, भारतेन्दु के पिता गोपालचन्द्र के *'नहुष'*, राजा लक्षमण सिंह के *शकुन्तला*आदि की चर्चा की जाती है। भारतेन्दु ने काफी संख्या में मौलिक नाटक लिखे। उन्होंने संस्कृत, बांग्ला और अंग्रेजी के नाटकों का अनुवाद भी

किया। उनके मौलिक नाटकों में एक तरफ अतीत का गौरवगान है तो दूसरी तरफ समसामयिक समस्याओं का चित्रण भी। उन्होंने युगानुरूप नई नाट्य परम्परा की शुरुआत भी की। भारतेन्दु के प्रसिद्ध नाटक *भारत-दुर्दशा* में देश की तत्कालीन दशा को लेकर गम्भीर चिन्ता झलकती है। इसमें स्पष्ट परिलक्षित है कि 'अंगरेज राज सुख-साज सजे सब भारी/ पै धन विदेश चलि जात इहै अति ख्वारी।' *विषस्य विषमौषधम* में देशी रियासतों के कुचक्रों की झाँकी है। *अन्धेर नगरी* भारतेन्दु का सर्वाधिक चर्चित नाटक है। इसमें तत्कालीन शासनव्यवस्था पर अत्यन्त तीखा व्यंग्य किया गया है। लोककथा और लोकरूपों का बेहतरीन प्रयोग करके इसमें सत्ता की विवेकहीनता को उजागर किया गया है।

भारतेन्दु युग में भारतेन्दु के अतिरिक्त लाला श्रीनिवास दास, प्रतापनारायण मिश्र, राधाचरण गोस्वामी जैसे रचनाकार भी नाटकों के माध्यम से युगीन चेतना का प्रसार कर रहे थे। नाटकों के प्रति भारतेन्दुयुगीन साहित्यकारों का रागात्मक झुकाव था। लाला श्रीनिवास दास ने *रणधीर प्रेममोहिनी, तृप्ता संवरण* और *संयोगिता स्वयंवर* जैसे नाटकों की रचना की जो अत्यन्त चर्चित हुए। प्रतापनारायण मिश्र ने *कलिकौतुक* शीर्षक से नाटक लिखा। श्री राधाचरण गोस्वामी के दो प्रहसन *तनमन गोसाईं जी को अर्पण* तथा *बूढ़े मुँह मुँहासे* उल्लेखनीय हैं। पहले प्रहसन में धर्म गुरुओं की छद्म लीलाओं को उजागर किया गया है। *बूढ़े मुँह मुँहासे* में परनारीगमन के दुष्परिणामों को रेखांकित किया गया है।

यह कहना गलत न होगा कि भारतेन्दु युग के रचनाकारों ने युगीन चेतना को व्यक्त करने के लिए नाटकों को माध्यम बनाया। नाटकों के प्रति उनके रुझान का अन्दाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि भारतेन्दु के साथ उनके मण्डल के अन्य लेखक जरूरत पड़ने पर स्वयं ही नाटकों के पात्रों की भूमिका का निर्वहन करने के लिए मंच से गुरेज नहीं करते थे। नाटक भारतेन्दु युग के लेखकों का औज़ार था। नाटक के अतिरिक्त भारतेन्दु युग के लेखकों ने पत्र-पत्रिकाओं को भी युगीन चेतना के प्रसार के लिए औजार बनाया।

भारतेन्दुयुगीन पत्र-पत्रिकाएँ युगीन चेतना की वाहक हैं। भारतेन्दुयुगीन रचनाकार पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से साहित्य को समृद्ध करते हुए देश की सेवा कर रहे थे। भारतेन्दु युग के प्राय: सभी महत्त्वपूर्ण साहित्यकार स्वयं ही पत्र-पत्रिकाएँ निकाल रहे

थे। इस युग में दो दर्जन से अधिक पत्र-पत्रिकाएँ निकल रही थीं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने सन् 1868 में *कविवचन सुधा* नामक पत्रिका निकाली। इसमें साहित्यिक रचनाओं के साथ सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विषयों पर विचार और टिप्पणी होती थी। इस पत्रिका में उन्होंने विलायती कपड़े के बहिष्कार की अपील की थी और ग्राम गीतों के संकलन की योजना प्रकाशित की थी। सन् 1873 में उन्होंने *हरिश्चन्द्र मैगजीन* नामक मासिक पत्रिका निकाली। 'हिन्दी नए चाल में ढली' की ऐतिहासिक घोषणा उन्होंने इसी में की। बाद में उन्होंने इस पत्रिका का नाम बदलकर *हरिश्चन्द्र चन्द्रिका* कर दिया। सन् 1874 में भारतेन्दु ने स्त्री शिक्षा के प्रसार के लिए *बालाबोधिनी* नामक पत्रिका निकाली।

प्रतापनारायण मिश्र *ब्राह्मण* नाम की पत्रिका निकालते थे। बालकृष्ण भट्ट *हिन्दी प्रदीप* नामक पत्र निकालते थे। इसका सम्पादन उन्होंने सन् 1872 में आरम्भ किया। अनेक प्रकार की कठिनाइयों को झेलते हुए भी वे इसे तैतीस वर्षों तक निकालते रहे। बच्चन सिंह के अनुसार- "देश प्रेम का जैसा उत्साह इस पत्र ने दिखलाया था वैसा अन्यत्र नहीं देखा गया। उन्हें राजभक्ति और देशभक्ति की खिचड़ी ना पसन्द थी।" बदरीनारायण चौधरी '*प्रेमघन*', *आनन्द कादम्बिनी* नाम की पत्रिका निकालते थे। उन्होंने बाद में *नागरी नीरद* नाम का पत्र भी निकाला। इन पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से उन्होंने अंग्रेजी नीति का भण्डाफोड़ किया और कर से पीड़ित किसानों के क्लेश का वर्णन किया।

बाबू कार्तिक प्रसाद खत्री ने हिन्दी संवाद पत्रों के प्रचार के लिए बहुत श्रम किया। उन्होंने *हिन्दी दीप्ति प्रकाश* नामक संवाद पत्र और *प्रेम विलासिनी* नामक पत्रिका निकाली। इस दौर के उल्लेखनीय पत्रों में *भारत मित्र*, *मित्र विलास*, *उचित वक्ता*, *सार सुधानिधि*, *भारत बन्धु* आदि महत्त्वपूर्ण हैं। कालाकांकर के देश भक्त राजा रामपाल सिंह '*हिंदोस्थान*' निकालते थे। इसके सम्पादकों में पण्डित मदन मोहन मालवीय, प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुन्द गुप्त आदि प्रमुख हैं। इस तरह भारतेन्दुयुगीन पत्रकारिता एक साथ साहित्यिक, राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक सभी मोर्चों पर देश और समाज की सेवा का संकल्प लिए लगातार आगे बढ़ रही थी।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है-"यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है तो निबन्ध गद्य की कसौटी है।" उनके अनुसार भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास

निबन्धों में ही सबसे अधिक सम्भव होता है। भारतेन्दु युग में निबन्ध का विकास अनिवार्य रूप से पत्र-पत्रिकाओं से जुड़ा हुआ है। भारतेन्दुयुगीन साहित्यकार अपने सामाजिक-राष्ट्रीय दायित्व का निर्वहन करते हुए अपने विचारों का प्रसार पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से करते थे। विविध विषयों पर वे अपने विचार निबंधों के रूप में प्रस्तुत करते थे। निबन्धों का विचारात्मक लेखों से गहरा सम्बन्ध है। भारतेन्दु युग के रचनाकार जीवन्त अभिव्यक्ति के धनी थे। रचनाकारों के व्यक्तित्व की छाप सीधे-सीधे उनके निबन्धों में उतरती है। उनके व्यक्तित्व की अनौपचारिकता, व्यंग्य विनोद, हास-परिहास वृत्ति और मस्ती उनके निबन्धों में स्वच्छन्द रूप में दिखाई पड़ती है।

भारतेन्दु ने अनेक प्रकार के निबन्ध-ऐतिहासिक, धार्मिक, साहित्यिक, आख्यानात्मक, भाषापरक, यात्रात्मक, विचारात्मक आदि लिखे। उनके निबन्धों में वैचारिक अन्तर्विरोध भी मिलता है। उपनिवेशवाद विरोधी विचारधारा उनके निबन्धों में दिखाई देती है। धर्म के सम्बन्ध में उनकी धारणा मूलत: प्रगतिशील थी। देशभक्ति और राजभक्ति के बीच अन्तर्विरोध के स्वर भारतेन्दु के निबन्धों में परिलक्षित होते हैं। वे सभी धर्मों और संस्कृतियों के मेलजोल से राष्ट्रीय जागरण और एकता पैदा करना चाहते थे। स्वदेशी पर उन्होंने बल दिया है। अपनी भाषा के प्रति भी उन्हें अत्यधिक प्रेम था। *स्वर्ग में विचार, सभा* और *भारत वर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है?* उनके उल्लेखनीय निबन्ध हैं।

बालकृष्ण भट्ट एवं प्रतापनारायण मिश्र भारतेन्दु युग के महत्त्वपूर्ण निबन्धकार हैं। बालकृष्ण भट्ट व्यंग्य-विनोदपूर्ण निबन्ध लिखते थे तो दूसरी तरफ विचारप्रधान और मनोवैज्ञानिक। बच्चन सिंह के शब्दों में "उनके भय, दृढ़ता, प्रेम और भक्ति आदि निबन्धों का विकास शुक्ल जी के मनोवैज्ञानिक निबन्धों में देखा जा सकता है। गद्य काव्य के आदि आचार्य वे ही हैं।" *(हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास,* पृष्ठ-317) प्रताप नारायण मिश्र के निबन्धों का स्वर भारतेन्दु की तरह ही है। उनके निबन्धों में व्यंग्य की पैनी धार स्पष्ट दिखाई पड़ती है। गम्भीर विषयों पर लिखते समय भी उनकी भाषा व्यंग्य, विनोदपूर्ण और पूरबीपन से युक्त होती थी। उनके निबन्धों में *बात, भौं, मनोयोग, समझदार की मौत* है आदि महत्त्वपूर्ण हैं। भारतेन्दु युग के अन्य निबन्धकारों में बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन और राधाचरण गोस्वामी उल्लेखनीय हैं। राधाचरण गोस्वामी का निबन्ध *यमलोक की यात्रा* प्रसिद्ध है।

निबन्ध के साथ ही भारतेन्दु युग में आलोचना का भी सूत्रपात होता है। इस युग के साहित्यकार पत्र-पत्रिकाओं में साहित्यिक-सामाजिक विषयों या कृतियों पर जो विचार प्रकट करते थे, वस्तुतः यह हिन्दी आलोचना का प्रारम्भिक रूप था। भारतेन्दु ने *नाटक* नामक निबन्ध में अपने मौलिक विचार प्रकट किये हैं। इसमें उन्होंने बताया है कि नाटककार को किन बातों का ध्यान रखना चाहिए। प्रेमघन ने बाणभट्ट पर एक भावुकतापूर्ण प्रशस्तिपरक लेख लिखा था। श्रीनिवास दास के *संयोगिता स्वयंवर* नाटक को लेकर पुस्तक समीक्षा के क्षेत्र में एक ऐतिहासिक वाद-विवाद हुआ है। प्रेमघन ने अपनी पत्रिका *आनन्द कादम्बिनी* में *संयोगिता स्वयंवर* की समीक्षा की। बालकृष्ण भट्ट ने *सच्ची समालोचना* शीर्षक से अपनी पत्रिका *हिन्दी प्रदीप* में इसकी समीक्षा की। बच्चन सिंह के शब्दों में- "वास्तविक आलोचना का समारम्भ बालकृष्ण भट्ट के निबन्धों से हुआ। भट्ट जी हिन्दी के पहले आलोचक हैं और *संयोगिता स्वयंवर* पर लिखी गई उनकी आलोचना पहली आलोचना (1886) है।"

धर्म, राजनीति और साहित्य के प्रति बालकृष्ण भट्ट का दृष्टिकोण प्रगतिशील और यथार्थवादी था। उन्होंने रीतिकालीन प्रवृत्तियों और परिपाटी युक्त शैली पर प्रहार किया। भारतेन्दुयुगीन आलोचना यद्यपि अपने आरम्भिक रूप में है, लेकिन अपने तेवरों से वह सुखद भविष्य का संकेत करती है।

भारतेन्दु युग में प्राचीन कथा आख्यान की परम्परा विद्यमान है। इसके साथ ही इस युग में आधुनिक ढंग के उपन्यास का भी उदय हुआ। यद्यपि उपन्यास और कहानी के ढाँचे को लेकर इस युग के रचनाकार स्पष्ट नहीं हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने *कुछ आप बीती कुछ जगबीती* नामक कहानी लिखनी शुरू की थी, लेकिन उसे वे पूरी नहीं कर पाए। शिवप्रसाद सितारे-हिन्द की *राजा भोज का सपना* को कहानी कह सकते हैं, लेकिन यह आधुनिक ढंग की कहानी नहीं, बल्कि प्राचीन परम्परा का कथा आख्यान ही है।

भारतेन्दु का ध्यान उपन्यास लिखने की ओर भी गया था। वे चाहते थे कि कोई रचनाकार उपन्यास लिखे। हिन्दी उपन्यास की परम्परा को *देवरानी-जेठानी की कहानी* (1870), *वामा शिक्षक* (1872) और *भाग्यवती* (1872) से जोड़ा जा सकता है, लेकिन इनमें औपन्यासिक तत्त्वों का अभाव है। रामचन्द्र शुक्ल ने लाला श्रीनिवास दास के *परीक्षा गुरु* (1872) को हिन्दी का पहला मौलिक उपन्यास माना है। इस

उपन्यास में मध्यवर्गीय जीवन के यथार्थ चित्रण के साथ नवजागरण की प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती है। बच्चन सिंह के अनुसार "प्रेमचन्द के आदर्शोन्मुख यथार्थ की गंगा की गोमुखी यही है।"

भारतेन्दु युग के महत्त्वपूर्ण उपन्यासकारों में बालकृष्ण भट्ट महत्त्वपूर्ण हैं। इनके दो उपन्यास *नूतन ब्रह्मचारी* (1887) और *सौ अजान एक सुजान* शिक्षा मूलक और सुधारवादी हैं। ये उपन्यास यथार्थ-चित्रण और व्यंग्यविनोद से युक्त हैं। इस युग के सर्वाधिक लोकप्रिय उपन्यासकार बाबू देवकीनन्दन खत्री हैं। उनका उपन्यास *चन्द्रकान्ता* (1891) इतना लोकप्रिय हुआ कि तिलस्मी उपन्यासों की धूम मच गई। उनका दूसरा उपन्यास *चन्द्रकान्ता सन्तति* भी बहुत लोकप्रिय हुआ। ये उपन्यास घटना-प्रधान रोमांच पैदा करने वाले और मनोरंजन प्रधान हैं। कहते हैं कि उन्हें पढ़ने के लिए बहुत लोगों ने हिन्दी सीखी।

देवकीनन्दन खत्री के तिलस्मी उपन्यासों की तर्ज़ पर गोपालराम गहमरी ने जासूसी उपन्यास लिखना शुरू किया। अपने उपन्यासों के प्रकाशन के लिए उन्होंने जासूस (1900) नाम के पत्र का प्रकाशन भी किया। पं. किशोरीलाल गोस्वामी इस युग के अन्य महत्त्वपूर्ण उपन्यासकार हैं। गोपालराम गहमरी ने लगभग दो सौ तथा किशोरीलाल गोस्वामी ने साठ से अधिक उपन्यासों की रचना की। किशोरीलाल गोस्वामी ने सामाजिक, ऐतिहासिक, ऐयारी-तिलस्मी और जासूसी सभी तरह के उपन्यास लिखे। मेहतालज्जाराम शर्मा का *धूर्त रसिकलाल* (1899), राधाकृष्णदास का *निस्सहाय हिन्दू* (1889), अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का *ठेठ हिन्दी का ठाट* (1889), ठाकुर जगमोहन सिंह का *श्यामा स्वप्न* (1885), अम्बिकादत्त व्यास का *आश्चर्य वृत्तान्त* (1893) इस युग के उल्लेखनीय उपन्यास हैं।

भारतेन्दु युग हिन्दी साहित्य के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ है। इस काल में हिन्दी साहित्य नवीन युग की आधुनिक चेतना के साथ नवजागरण की भावना से अनुप्राणित है। हिन्दी साहित्य रसिक दरबार की कारा से मुक्त होकर जनता तक पहुँचता है। लोकभाषा के रूप में प्रचलित खड़ीबोली हिन्दी साहित्य की वाहक बनती है। हिन्दी साहित्य में अनेक गद्य विधाओं का प्रादुर्भाव हुआ। भारतेन्दुयुगीन नवजागरण की चेतना एक तरफ सामन्ती मूल्यों से संघर्ष करती थी तो दूसरी तरफ

साम्राज्यवादी ताकतों से। भारतेन्दुयुगीन रचनाकारों का साहित्य के माध्यम से जनता के लिए किए जाने वाला संघर्ष अप्रतिम है।

1. **निष्कर्ष**

हिन्दी साहित्य में आधुनिक युग का सूत्रपात वास्तविक रूप में भारतेन्दु युग से हुआ। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र आधुनिक हिन्दी साहित्य और खड़ीबोली गद्य के प्रर्तक हैं। भारतेन्दु युग में कविता की भाषा प्रधानतः ब्रज थी लेकिन वह रीतिकालीन ब्रज भाषा से अलग होते हुए युगीन चेतना से बदले हुए रूप में जुड़ती थी। इस युग में नाटकों का पुनर्प्रचलन साहित्येतिहास में ऐतिहासिक महत्त्व का है। इस युग में निबन्ध और आलोचना का विकास अपने आरम्भिक दौर में था, लेकिन पूर्वपीठिका के रूप में उनकी महत्ता असन्दिग्ध है।